RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17, अंक-2, मार्च अप्रैल मई 2024

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17 | अंक - 2 | मार्च-अप्रैल-मई-2024

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती और उनके मुरीद शासक

नरेन्द्र सिंह नाथावत
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

सूफ़ी रहस्यवाद इस्लाम के भीतर वह धारा है जिसने कठोरता और शुष्कता की अपेक्षा प्रेम, भक्ति, आत्मिक पवित्रता, निरंतर सद्भावना, सत्य और ईश-समर्पण को प्रधानता दी। इस्लाम में प्रचलित औपचारिक अनुष्ठानों तथा बाहरी दिखावे की तुलना में सूफी परम्परा की आत्मा निस्स्वार्थ साधना और मानव-मैत्री की भावना है। इसी के कारण कहा गया कि सूफी मत किसी विशेष जाति या संप्रदाय का प्रतिनिधि नहीं बल्कि ऐसी वैश्विक चेतना है जो मानव-हृदय की गहराई में उतरकर उसे सत्य, भलाई और प्रेम की दिशा में ले जाती है। शब्द 'सूफ़ी' की मूल व्याख्या ऊन से बने साधारण वस्त्रों को पहनने के कारण की गई, जैसा कि ई.जी. ब्राउन ने अपनी 'लिट्रेरी हिस्ट्री ऑफ पर्शिया' में उल्लेख किया है। ऊन का वस्त्र दरअसल भौतिक वैभव से अनासक्ति और जीवन की सरलता का प्रतीक था। परंतु सूफी सम्प्रदाय की पहचान केवल उनके वस्त्रों से नहीं, बल्कि उनके हृदय की निर्मलता और उनके व्यवहार की पवित्रता से होती थी।

आरंभ में सूफी कोई संगठित सम्प्रदाय नहीं था, जैसा कि गोल्डजिहेर ने 'जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसायटी' में कहा, पर समय बीतने के साथ यह आध्यात्मिक मार्ग अधिक स्पष्ट रूप में विकसित हुआ। 'कश्फ़-उल-महजूब' के लेखक हज्वेरी ने सूफियों में प्रार्थना, उपासना और ईश-समर्पण को मूल तत्त्व माना। यही समर्पण आगे चलकर सेवा और मानव-प्रेम के रूप में प्रत्यक्ष हुआ। यह धार्मिक सम्प्रदाय होने के बावजूद कठोर सिद्धांतों या मतवादों का पोषक नहीं था; इसके विपरीत यह निष्कपट प्रेम का प्रतीक था। सूफियों ने शिया-सुन्नी के मतभेदों को न मानते हुए सभी को समान दृष्टि से देखा और इसी से यह परम्परा अधिक लोकप्रिय एवं समन्वयवादी बनी।

सूफ़ी सम्प्रदाय का उद्भव इस्लाम के भीतर ही हुआ, और नमाज़, रोज़ा, हज आदि इस्लामी नियमों को इन्होंने पूर्णत: मान्यता दी; परंतु उनका दृष्टिकोण इस्लाम के बाहरी रूप से अधिक उसकी आत्मिकता पर केन्द्रित था। प्रो. के.ए. निजामी ने इसे स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है। दूसरी ओर कुछ विद्वानों ने सूफ़ी विचारधारा के बीज यूनानी चिंतन में भी खोजने का प्रयास किया। किंतु मूलत: सूफी मत का स्वर मानव-हृदय को ईश्वर की ओर प्रवाहित करना और उसके भीतर की अंतर्दृष्टि को जगाना था। इसी अंतर्दृष्टि से 'परमतत्त्व' के साक्षात्कार की अनुभूति प्राप्त होती है, जैसा कि विमल कुमार जैन ने कहा। इस मार्ग में ज्ञान, पवित्रता, निष्कपटता और पूर्ण समर्पण आवश्यक अंग थे, और यही उसे अन्य धार्मिक धाराओं से भिन्न और उत्कृष्ट बनाता है।

इसी सूफ़ी परंपरा की सबसे प्रभावशाली अभिव्यक्ति भारत में ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती के रूप में

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

दिखाई देती है। उनका व्यक्तित्व आध्यात्मिक ऊँचाई और मानवीय करुणा से ओत-प्रोत था। उन्होंने अजमेर को अपना केंद्र बनाया और वहीं से भक्ति, मानव-प्रेम, सेवा और सत्य की धारा पूरे उत्तर भारत में प्रवाहित की। राजाओं या अमीरों से दूरी बनाने के बजाय उन्होंने उन्हें भी आध्यात्मिक मार्ग के लिए प्रेरित किया, क्योंकि उनके लिए शासक और सामान्य व्यक्ति में कोई भेद नहीं था; दोनों आत्मा के स्तर पर समान थे। यही कारण था कि दिल्ली सल्तनत और मुगल शासकों में से अनेक उनके अनुयायी, सम्मानक और सेवक बने। इल्तुतमिश से लेकर अकबर तक अनेक शासक उनके दर पर उपस्थित हुए और आध्यात्मिक दृष्टि से प्रेरित हुए। उनके लिए सत्ता नहीं, बल्कि सत्य महत्वपूर्ण था; और इसी सत्य की खोज में उनके समक्ष हर शासक विनम्रता से झुकता था।

ख्वाजा साहब का यह प्रभाव केवल धार्मिक या आध्यात्मिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक समन्वय का प्रेरक बना। उनके कारण अजमेर और भारत के आम जनमानस में धार्मिक सहिष्णुता, परस्पर सम्मान और प्रेम का वातावरण विकसित हुआ। उनके दर्शन में किसी के प्रति घृणा या वैमनस्य का स्थान नहीं था; उन्होंने कहा कि मनुष्य ईश्वरीय प्रेम का पात्र तभी बनता है, जब वह मानवता से प्रेम करना सीख ले। यही संदेश उन्हें महान बनाता है और यही उन्हें इतिहास में अपरिमित प्रभावशाली व्यक्तित्व प्रदान करता है।

तसव्वुफ़ सूफ़ी परंपरा का वह आध्यात्मिक केंद्र है, जिसमें मानव आत्मा और परमतत्व के बीच गहरा संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया निहित है। यह विचार मात्र दार्शनिक अवधारणा नहीं, बल्कि शुद्ध एवं संपूर्ण आध्यात्मिक साधना है। विद्वानों ने इसकी प्रकृति पर अनेक मत प्रस्तुत किए हैं। कमरुल हसन क़ादरी के मत में तसव्वुफ़ उस स्थिति को प्राप्त करने का माध्यम है जिसमें मनुष्य सांसारिक मोह से पूर्णत: विमुक्त होकर ईश्वर के प्रति अपने अस्तित्व का समर्पण करता है। सूफ़ी मत में संसार से वैराग्य का अर्थ पलायन नहीं, बल्कि ईश्वर से गहन तादात्म्यता है। यह तादात्म्य मानव के भीतर ऐसी चेतना जगाता है जो उसे ज्ञान, पवित्रता और शुद्ध भावनाओं की ओर उन्मुख करती है।

निकोल्सन के अनुसार तसव्वुफ़ मूलत: मनुष्य के व्यक्तित्व का निराभाव है, अर्थात् मानव आत्मा स्वयं को ईश्वर में लीन कर देती है। यह स्वार्थ, अहंकार और देह-अस्मिता से परे का अनुभव है। इसमें मनुष्य की सत्ता की सीमा नहीं रहती; वह अपने अस्तित्व में ईश-तत्त्व का अनुभव करता है। यही कारण है कि तसव्वुफ़ रहस्यवाद का चरम भाव आध्यात्मिक एकत्व है। माग्रेट स्मिथ ने अपने अध्ययन में बताया कि यह एकत्व महज़ ईश्वर दर्शन नहीं बल्कि ईश्वर से पूर्ण संयोग की स्थिति है। यह अवस्था साधक की नैतिक शुचिता, आध्यात्मिक अनुशासन और मनोवैज्ञानिक परिपक्वता की मांग करती है।

एडलबर्ट मर्क्स ने इसे यूनानी दर्शन से प्रभावित माना है, जहाँ आत्मा की शुद्धि और ईश्वरत्व की खोज का विचार विद्यमान रहा। परंतु निकोल्सन ने इसका खंडन करते हुए यह स्पष्ट किया कि किसी भी दार्शनिक विचार का पूर्ण अलगाव सम्भव नहीं होता। युग-युग में विभिन्न विचारधाराएँ एक-दूसरे का अवगाहन करती रहती हैं। इसलिए तसव्वुफ़ यदि यूनानी तत्वों से मिलता-जुलता प्रतीत होता है तो यह केवल ऐतिहासिक विचार-समन्वय की परिणति है, मूल तत्व इस्लामी ही है।

शेनाल्ड के मत में तसव्वुफ़ का उद्देश्य जगत को त्याग कर केवल परमतत्व को धारण करना है।

सांसारिक वस्तुएँ अन्ततः मायिक हैं और सत्य केवल ईश्वर है। यह दृष्टि अद्वैत वेदान्त से सामंजस्य रखती है, जहाँ शंकराचार्य ने ब्रह्म को एकमेव सत्य कहा और संसार को माया। इस दृष्टि से तसव्वुफ़ और अद्वैत दोनों का लक्ष्य आत्मा को ईश्वर में अवगाहन कराना है। यह दर्शन आत्मिक मुक्ति के प्रति एकत्व का भाव प्रकट करता है।

मेहमूद ज़की ने तसव्वुफ़ की व्याख्या ईश्वर और जगत को आपसी एकत्व के रूप में की है। उनके अनुसार यह आत्मसात होने की अवस्था है जिसमें साधक को ईश्वर और प्रकृति में कोई विरोध नहीं दिखाई पड़ता। यह नैतिकता और आध्यात्मिकता की चरम अवस्था है। मनुष्य जब स्वयं को ईश-तत्त्व के रूप में पहचान लेता है तब उसके जीवन में नैतिक आचार, सच्चाई, करुणा तथा ईमान की भावना स्वतः विकसित हो जाती है। यही तसव्वुफ़ का सर्वोच्च योगदान है— मनुष्य को ऐसे आध्यात्मिक स्तर तक उठाना जहाँ वह केवल मनुष्य नहीं, बल्कि मानवता का मार्गदर्शक हो जाता है।

तसव्वुफ़ का सार यही है कि यह केवल किसी रहस्यवाद की सूक्ष्म दार्शनिक अवधारणा न होकर मानव जीवन के सर्वोच्च नैतिक व्यवहार का पर्याय है। तसव्वुफ़ सत्कर्म, परोपकार, भौतिक लोभ का परित्याग, ईश्वर के प्रति सम्पूर्ण समर्पण और अपनी सत्ता को ईश्वर में लीन कर देने की साधना है। जहाँ आत्म 'फानी' हो जाती है और आत्मा 'बाकी' अर्थात् ईश्वर में स्थित हो जाती है। यही अवस्था 'वस्ल' है — ईश्वर साक्षात्कार की वह परमानंद अवस्था जो सत्य (हक़) में विलीन होकर ही संभव होती है। रिसाला-ए-तसव्वुफ़ में इसी भाव को संक्षिप्त रूप से तसव्वुफ़ का सार माना गया है।

प्रोफेसर निजामी के मत में मंगोल नेता हलाकू के आक्रमणों के समय मुस्लिम समाज में जो नैतिक पतन और अस्थिरता उत्पन्न हुई, उसने सूफ़ी सम्प्रदाय को एक नैतिक एवं आध्यात्मिक रक्षक की भूमिका प्रदान की। अतः सूफ़ी संप्रदाय का विकास केवल आध्यात्मिक चिंता का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक आवश्यकता की भी पूर्ति था। यद्यपि कुरान में सूफ़ी शब्द प्रत्यक्ष रूप से नहीं आता, परन्तु 'मुक्करिव' — ईश्वर से निकटता प्राप्त करने वाला, 'हिकमत साबिरीन'— धैर्यवान, 'अब्रार'— पुण्यात्मा जैसे शब्द तसव्वुफ़ के भावों को संकेतित करते हैं। इस दृष्टि से शेख शहाबुद्दीन सुहरावर्दी का यह कथन सही प्रतीत होता है कि 'मुक्करिव' ही सूफ़ी मत का द्योतक है।

निकोल्सन तथा ब्राउने दोनों ने सूफ़ी विचारधारा की जड़ कुरान में मानी है। उनके लिए सूफ़ीमत उस इस्लामी आध्यात्मिक परंपरा का तार्किक विकास है जिसका मूल स्रोत कुरान की दया, विनम्रता, प्रेम, ईश्वर के साथ एकत्व और आत्म-शुद्धि जैसी शिक्षाएँ हैं। इसके विपरीत ई.एच. पामर ने इसे आर्य जाति के धार्मिक विकास से प्रभावित माना, जबकि थॉमस पैट्रिक ह्यूजेस तथा सर विलियम जोंस ने वेदान्त दर्शन को इसका दार्शनिक आधार स्वीकार किया। इस प्रकार सूफ़ीमत किसी सम्प्रदाय की बंद परंपरा नहीं रहा, बल्कि सत्य की उन सार्वभौमिक अवधारणाओं का प्रतिरूप रहा जो विभिन्न संस्कृति और दर्शन में पाई जाती हैं।

भारत में सूफ़ीमत का प्रवेश मुस्लिम आक्रमणों के साथ हुआ। धीरे-धीरे यह सिन्ध, पंजाब, दिल्ली, अजमेर से होते हुए देवगिरि तक फैल गया। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन ने पहले से ही ऐसी भावभूमि तैयार कर दी थी जहाँ ईश्वर से प्रेम, मानवता और आत्म-शुद्धि के सिद्धांत प्रभावी थे। सूफ़ी विचारधारा ने इसी भावभूमि को अपने आध्यात्मिक और नैतिक दर्शन से और अधिक सशक्त बनाया। इसी दौर में भारत

में चिश्ती, सुहरावर्दी, कादिरी, नक्शबन्दी इत्यादि सूफ़ी सम्प्रदाय प्रचलित हुए। अबुल फ़ज़ल ने 'आईन-ए-अकबरी' में सूफ़ी सम्प्रदाय के 14 प्रसिद्ध संप्रदायों का उल्लेख किया है, जिनमें सर्वाधिक प्राचीन और प्रभावशाली चिश्ती सम्प्रदाय रहा।

भारत में चिश्ती सम्प्रदाय का वास्तविक प्रवर्तन शेख मुइनुद्दीन चिश्ती ने किया। 1141 ई. में सिस्तान (ईरान) में जन्मे ख्वाजा साहब ने भारत में अजमेर को अपना केंद्र बनाया। उनका प्रभाव केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी अत्यंत व्यापक रहा। उनके शिष्य काज़ी हमीमुद्दीन नागौरी भारत में जन्म लेने वाले पहले सूफ़ी संत माने जाते हैं, जिन्होंने 'कुव्वत-उल-कुलुब' और 'रूह-उल-अरवाह' जैसे प्रसिद्ध ग्रंथ लिखे। सूफ़ियों की शिक्षा 'खानकाहों' में दी जाती थी जहाँ भेदभाव रहित, प्रेम, सेवा और त्याग का आदर्श प्रत्यक्ष रूप में देखने को मिलता था। विद्या या ज्ञान में अभिमान उन्हें स्वीकार न था। शरीयत का ज्ञान केवल दूसरों को नियंत्रित करने के लिए नहीं, बल्कि स्वयं के आध्यात्मिक उत्थान के लिए था।

तसव्वुफ सूफी मत का मुख्य आधार है, जिसमें मनुष्य ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण, वैराग्य और आध्यात्मिक प्रेम की साधना करता है। विद्वानों के अनुसार तसव्वुफ आत्मा को उच्च चेतना की अवस्था में पहुँचाता है जहाँ अभिमान का लय होकर ईश्वर तत्व का अनुभव होता है। इसे अद्वैत वेदान्त के समीप माना गया जहाँ परम सत्य केवल एक है और जगत माया के रूप में स्वीकार होता है। सूफी मत सत्कर्म, परोपकार, भौतिक आकर्षणों से विरक्ति, आत्म-विलय (फना) और ईश्वर-साक्षात्कार (वस्ल) को अपने उद्देश्यों के रूप में मानता है।

इतिहास में मंगोल आक्रमणों के दौरान इस्लामी समाज की नैतिक रक्षा और आध्यात्मिक आधार के रूप में सूफी आन्दोलन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कुरान में 'सूफी' शब्द प्रत्यक्ष नहीं मिलता, पर उसके आध्यात्मिक भाव तसव्वुफ से मेल खाते हैं। कुछ विद्वान इसके मूल को इस्लामी, कुछ इसे आर्य और कुछ वेदान्तिक परम्परा का प्रभाव मानते हैं। भारत में सूफी मत प्रारम्भ से ही गंगा-जमुनी संस्कृति का आधार बना। चिश्ती, सोहरावर्दी, कादिरी, नक्शबन्दी जैसे सम्प्रदाय विकसित हुए जिनमें चिश्ती सर्वप्रमुख रहा।

भारत में सूफियों ने खानकाहों के माध्यम से आध्यात्मिक जीवन, मानव-सेवा और प्रेम का संदेश दिया। शेख मुइनुद्दीन चिश्ती ने अजमेर को केन्द्र बनाकर धर्म-निरपेक्षता, प्रेम और भाईचारे का वातावरण उत्पन्न किया। उनकी खानकाह में मुस्लिमों के साथ-साथ हिन्दू राजा, सामन्त और प्रजा भी श्रद्धा से आते थे। यहां तक कि पृथ्वीराज, महाराणा प्रताप, शिवाजी और उनके वंशजों द्वारा 'नजर' भेंट किये जाने के प्रमाण मिलते हैं।

सूफी साधक दस आध्यात्मिक अवस्थाओं से गुजरकर आत्मोन्नति प्राप्त करता है—जहां पश्चाताप से लेकर कृतज्ञता तक का क्रम उसे वास्तविक ईश्वर-चिन्तन और प्रेम की ओर ले जाता है। उनके जीवन का उद्देश्य ज्ञान का अभिमान नहीं बल्कि आत्मिक उन्नयन और जन-कल्याण होता है। धन और प्रतिष्ठा को त्यागकर मानवता की सेवा के द्वारा सूफियों ने भारतीय समाज में नैतिकता, आध्यात्मिकता और सांस्कृतिक समन्वय की आधारशिला रखी।

अजमेर दरगाह से हिन्दू शासकों का गहरा संबंध रहा। नागपुर के राजा छत्रसिंह भोंसले नियमित रूप से नजर भेंट करते थे और उनके धार्मिक कार्य खादिम सैय्यद मुजफ्फर अली के माध्यम से सम्पन्न होते थे। चिश्ती सूफियों के प्रति हिन्दू समाज की यह श्रद्धा न केवल धार्मिक, बल्कि सामाजिक समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण है। सूफी मत का मर्म जीवन के निषेध योग्य विषयों से दूर रहकर हृदय में परमशक्ति का स्मरण करना है – जैसा कि शेख फरीद ने निजामुद्दीन औलिया को उपदेश दिया था।

निजामुद्दीन औलिया ने मानव सेवा को सर्वोच्च धर्म माना। उनके अनुसार सभी धर्मों से ऊपर मानवता का प्रेम और सहायता है। यह भक्ति धारा के अनुकूल सामाजिक-धार्मिक समरसता का प्रतीक बन गया। मुइनुद्दीन चिश्ती के हिन्दू राजकुमारी से विवाह ने मध्यकालीन समाज में उदारवादी दृष्टिकोण और सांस्कृतिक एकात्मता को बल दिया। शेख हमीरुद्दीन ने हिन्दू आध्यात्मिक परम्पराओं की प्रशंसा की और चिश्ती खानकाहों में वेदान्त और कर्म सिद्धान्त पर आधारित हिन्दू संगीतज्ञों को संरक्षण दिया।

सूफी साहित्य, संगीत और साधना में वेदान्त, योग, नाथ-मत, बौद्ध चिंतन आदि तत्वों का समन्वय हुआ जिससे साझा सांस्कृतिक विरासत का निर्माण हुआ। परिणाम स्वरूप हिन्दू समाज में सूफियों के शब्द, रीति और व्यवहार के रूप प्रचलित हुए। जायसी की रचनाओं में हिन्दू देवी-देवताओं, योग और वेदान्त का वर्णन मिलता है तथा गुरु ग्रंथ साहब में शेख फरीद के उपदेश संकलित हैं।

राजपूत शासकों—बूंदी, कोटा, किशनगढ़, हाड़ौती—की भेंट, नजर तथा भूमि-दान के प्रमाण अजमेर दरगाह के अभिलेखों में सुरक्षित हैं। सजावट, सामग्रियाँ और उपासना के कार्यों में हिन्दू व्यापारी भी भाग लेते थे। किशनगढ़ के महाराजा मानसिंह ने भूमि सनद और वकालतनामा प्रस्तुत कर ख्वाजा साहब से आशीर्वाद की प्रार्थना की थी।

अजमेर के रूपनगढ़ के सरदार सिंह का ख्वाजा साहब से निकट संबंध रहा। इसका स्पष्ट उदाहरण 1760-66 में अमस्पंद चित्रकार द्वारा बनाई गई चांदनी रात की 'कव्वाली' चित्रकृति में सरदार सिंह का उपस्थित दिखना है।

जयपुर के महाराजा सवाई माधोसिंह ने भी अपने वकील सैय्यद मसूद को 'तव्वुरुक' भेजकर यह कहा था कि वे उनकी ओर से ख्वाजा साहब से प्रार्थना करते रहें। इसी प्रकार बूंदी के राजा अमर सिंह ने ख्वाजा साहब के नाम से गाँव भेंट देकर निरंतर उन्नति हेतु आशीर्वाद प्राप्त करने की भावना व्यक्त की।

निष्कर्षत: अजमेर में ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह केवल मुस्लिम श्रद्धालुओं की आस्था का केन्द्र नहीं रही, बल्कि हिंदू शासकों और जनसमुदाय में भी गहरी श्रद्धा थी। रूपनगढ़ के सरदार सिंह का दरगाह से संबंध, जयपुर के महाराजा माधोसिंह द्वारा ख्वाजा से प्रार्थना के लिए वकील भेजना, तथा बूंदी के राजा द्वारा गाँव भेंट करना—ये सभी प्रमाण दर्शाते हैं कि सूफी चिश्ती परंपरा का प्रभाव सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक सभी समुदायों पर रहा। संगीत, कला, और सामाजिक समरसता के आधार पर सूफी विचार भारतीय परंपरा से सामंजस्य रखता रहा और समाज में प्रेम, करुणा और आस्था का केंद्र बना।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. राम पूजन तिवारी, सूफी मत, साधना और साहित्य, बनारस, संवत 2013
2. युसुफ हुसैन, मध्ययुगीन भारतीय संस्कृति-एक झलक, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ़, 1922
3. बस्तवी, कमरुल हसन कादरी, 'इमाम अहमद रजा का फ़लसफ़ा तसव्वुफ़, दिल्ली, 1990
4. मेहमूद जकी, तसव्वुफ़ की अफादियत , लेख, राष्ट्रीय सहारा, अक्टूबर 1993
5. किशोरी प्रसाद साहु, मध्यकालीन उत्तर भारतीय सामाजिक जीवन के कुछ पक्ष, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1981
6. रामफल सिंह, हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक एकता का इतिहास, दिल्ली, 1989
7. दयालदास, राणा रासो, दोहस क्रमांक 580/82, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर
8. वकालतनामा ऑव राजा साहू, 1/1, सैय्यद मुराद-सैय्यद मसूद कलेक्शन, अजमेर
9. रजिस्टर संख्या 7/148, दस्तावेज संख्या 6/13, सैय्यद मुराद-सैय्यद मसूद कलेक्शन, अजमेर
10. लियाकत हुसैन मोइनी, The City of Ajmer during the 18th Century, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, ए.एम.यू., अलीगढ़, 1987
11. दरगाह फाइल्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर, 435/437 तथा 6/63
12. दरगाह फाइल 322/66, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर; कुब्जुल वसूल 1876, 1846, 1863
13. डिकेनसन ई. एवं के. खण्डेलवाल, किशनगढ़ पेंटिंग, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, 1959
11. E. G. Browne, Literary History of Persia, 4 vols., London, 1909
12. Sheikh Al-Hujwiri, Kashf-ul-Mahjoob, (Trans. Reynold A. Nicholson), Delhi, 1982
13. A. M. Shusteri, An Outline of Islamic Culture, Vol. 2, Bangalore, 1954
14. Prof. K. A. Nizami, Religion and Politics in Thirteenth Century, Delhi, 1974
15. Nicholson, A Literary History of the Arabs, Cambridge, 1930
16. D. B. Nicholson, A Literary History of the Arabs, Cambridge, 1930
17. Thomas Patrick Hughes, Dictionary of Islam, Delhi, 1988
18. Dr. A. L. Srivastava, Medieval Indian Culture, Agra, 1971
19. Sheikh Ali Hujwiri, Kashf-ul-Mahjoob, (Trans. R. A. Nicholson), Delhi, 1982
20. A. Rashid, Society and Culture in Medieval India, Calcutta, 1969
21. P. A. Qureishi, The Shrine and Cult of Moinuddin Chishti of Ajmer, Oxford University Press, Bombay, 1992